**ओ३म्**

**आर्य स्थापना दिवस पर**

**‘आर्यसमाज की स्थापना से संसार में नए युग का शुभारम्भ’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

यह संसार विगत लगभग 2 अरब वर्षों से अस्तित्व में है। इस अवधि में नाना महत्वपूर्ण ऐतिहासक घटनायें घटी हैं परन्तु उनमें से कुछ थोड़ी सी घटनाओं के दिन व तिथियां ही ज्ञात हैं। आज से 140 वर्ष पूर्व चैत्र शुक्ल पंचमी तदनुसार 10 अप्रैल, 1875 को महर्षि दयानन्द सरस्वती ने मुम्बई के गिरगांव मोहल्ले के काकड़वाड़ी स्थान में प्रथम आर्य समाज की स्थापना वहां के निवासियों के अनुरोध पर की थी। अगले दिन उन्होंने अपने एक शिष्य श्री गोपाल राव हरि को पत्र में इसका विवरण दिया था। यह पत्र आर्यसमाज की स्थापना तिथि का सबसे अधिक प्रमाणिक दस्तावेज है। सबसे पहला प्रश्न यह है कि आर्य समाज की स्थापना क्यों की गई? संसार में देशी व विदेशी अनेक मत-मतान्तर तो थे हीं, फिर आर्य समाज की स्थापना करने की आवश्यकता क्यों पड़ी। यह बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न है जिसका उत्तर भी उतना व उससे अधिक महत्वपूर्ण है। इसका मुख्य एक वाक्य का उत्तर तो यह है कि उन दिनों सत्यधर्म का लोप हो गया था, कोई सत्य मत, सत्य धर्म, सत्य सम्प्रदाय व सत्य पन्थ नहीं था जो यह बताता कि मनुष्य जीवन का उद्देश्य क्या है? उस उद्देश्य की प्राप्ति के उपाय क्या हैं? यह संसार किसने, कब, किससे व क्यों बनाया और मनुष्यों आदि प्राणियों को किसने व क्यों जन्म दिया? मनुष्य के शरीर में जो चेतन तत्व है क्या वह अनित्य है वा नित्य, अनादि है व सादि, अजन्मा है या उत्पन्न होने वाला, अविनाशी है या विनाशी? इन व ऐसे अनेक प्रश्न थे जो अनुत्तरित थे। यह भी प्रश्न था कि यदि यह संसार ईश्वर जैसी किसी सत्ता से बना है तो उस ईश्वर का सत्य स्वरूप कैसा है और क्या वह भी सत्य, अनादि, नित्य, अनुपम, सर्वज्ञ, आनन्दस्वरूप, निराकार, सर्वव्यापक, सभी प्राणियों का माता-पिता के समान सुहृद व हिताकांक्षी है अथवा नहीं? महर्षि दयानन्द के पास इन सब प्रश्नों एवं और अन्य महत्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तर थे। इन सब प्रश्नों के सही-सही उत्तर देने और संसार से अज्ञान, अन्धविश्वास, भेदभाव, अशिक्षा हटाकर सबको समान अधिकार दिलाने के किये महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना की थी, अतः आर्य समाज की स्थापना का उद्देश्य युक्ति, तर्क व प्रमाण सिद्ध है।

**मनमोहन कुमार आर्य**

 अब प्रश्न है कि आर्य समाज ने किया क्या है? इसे भी संक्षेप में जान लेते हैं। आर्य समाज ने पहला कार्य तो यह किया कि प्रायः सभी विषयों पर सत्य मान्यताओं से युक्त एक युगान्तरकारी धर्म ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकार संसार के लोगों को दिया है। हम समझते हैं कि यही वर्तमान समय का मानव जीवन के उद्देश्य की पूर्ति में सहायक सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी धर्म ग्रन्थ है। जो मनुष्य इसका अध्ययन कर इससे लाभ ले रहे हैं वह भाग्यशाली हैं और अन्य जिन्होंने इसका महत्व नहीं समझा उनका हतभाग्य है। सत्यार्थ प्रकाश में 14 समुल्लासों में सभी विषयों पर प्रकाश डाला गया है। प्रथम 10 अध्याय या समुल्लास ग्रन्थ के पूर्वाद्ध के हैं जिनमें ईश्वर के स्वरूप, गुणों व कार्यों का अद्भुत वर्णन हैं। इसमें बताया गया है कि वेद आदि शास्त्रों में ईश्वर के भिन्न-भिन्न नाम ईश्वर के अनेकानेक गुणों व हमसे सम्बन्धों आदि के कारण हैं परन्तु उसकी सत्ता केवल एक है। दूसरे समुल्लास में शिक्षा, तीसरे में अध्ययन-अध्यापन विधि व पाठ्यक्रम, चौथे में समावर्तन, विवाह और गृहस्थाश्रम विषय, पांचवे में वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम, छठे में राज-प्रजा-धर्म विषय, सातवें में ईश्वर और वेद विषय, आठवें में सृष्टि उत्पत्ति, स्थिति तथा प्रलय विषय, नौवें में विद्या-अविद्या, बन्धन और मोक्ष विषय तथा दशम् समुल्लास में आचार-अनाचार, भक्ष्य और अभक्ष्य विषयों का विस्तार से युक्ति व वेद शास्त्र प्रमाण सिद्ध वर्णन है। इसकी सत्यता की साक्षी हमारी सब लोगों की आत्मायें हैं। उत्तरार्द्ध के चार समुल्लासों में मत-मतान्तरों की असत्य व अन्धविश्वासों से युक्त बातों का दिग्दर्शन कराकर उनकी सर्वजनहितार्थ समीक्षा की गई है जिससे पाठक सत्य व असत्य का निर्णय कर सत्य का ग्रहण व असत्य का त्याग कर सकें।

 महर्षि दयानन्द ने अपने विद्यार्थी काल में जो पांच की आयु में आरम्म हुआ था, यहां से 21 वर्ष तक की आयु में घर पर रह कर तथा इसके पश्चात सन् 1846 में उनके टंकारा, राजकोट से गृहत्याग से आरम्भ होता है तथा सन् 1863 तक के 17 वर्षों तक चला जिसमे उनके द्वारा देश का भ्रमण कर जहां जो भी गुरू, ज्ञानी व योगी मिला उससे ज्ञान प्राप्त किया। यहां तक की हिमाच्छादित पहाड़ों के शिखरों में जाकर वहां कन्दराओं में भी ज्ञानी गुरूओं व योगियों की तलाश की और जहां जो मिला, उससे जो कुछ भी सीख सकते थे, सीखा। अन्ततः उन्हें प्रज्ञाचक्षु गुरू स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी का पता मिला जो मथुरा में निवास करते थे और वहां वेद व्याकरण अष्टाध्यायी महाभाष्य निरूक्त पद्धति का अध्ययन कराते थे। इन गुरूजी से अध्ययन कर महर्षि दयानन्द की सभी शंकाओं का निराकरण हुआ था। इस समस्त अध्ययन व परीक्षा के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि पूर्ण शुद्ध व सत्य ज्ञान से युक्त संसार में सबसे प्रमाणित ग्रन्थ केवल ईश्वर प्रदत्त ज्ञान **“चार वेद”** ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद ही हैं। वेदों के बाद, 4 उपवेद, 6 वेदांग और 6 उपांग अर्थात् 6 दर्शन योग, सांख्य, वेदान्त, वैशेषिक, न्याय व मीमांसा का भी तत्वज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान है। अतः उन्होंने सभी मत-मतान्तरों की समीक्षा वेद ज्ञान के आलोक में की और वेदानुकूल को सत्य तथा वेद विरूद्ध को मिथ्या सिद्ध किया। तर्क व युक्ति तथा सृष्टि क्रम के अनुकूल सिद्धान्त का प्रयोग करने पर भी वेदानुकूल ही सत्य सिद्ध होता है तथा वेद विरूद्ध मान्यतायें व विश्वास-आस्थायें असत्य सिद्ध होती हैं। अतः सत्यार्थ प्रकाश लिख देने के बाद भी उन पर यह दायित्व आ गया कि वह वेदों का भी सरल व सुबोध भाष्य करें। अतः वह इस कार्य में भी प्रवृत्त हुए और सबसे पहले उन्होंने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका नाम का विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ लिखा। इसे देश-विदेश के सभी प्रमुख व प्रतिष्ठित विद्वानों को समीक्षार्थ भेजा गया जिनमें प्रो. मैक्समूलर भी सम्मिलित थे। यदि कभी किसी ने इनकी ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका पर कोई शंका व टिप्पणी की तो महर्षि दयानन्द ने उसका प्रमाण पुरस्सर उत्तर दिया। स्वामीजी ने सभी शंकाकत्र्ताओं को निरूत्तर कर दिया। इस प्रकार से वेदों के भाष्य का कार्य आरम्भ हुआ। महर्षि दयानन्द ने वेदों की भूमिका के बाद ऋग्वेद एवं यजुर्वेद के संस्कृत व हिन्दी में भाष्य का कार्य भारी पुरूषार्थ करके किया। उन्होंने यजुर्वेद का पूरा भाष्य किया। वह ऋग्वेद के 10 मण्डलों में से 7 वें मण्डल का आंशिक भाष्य ही कर पाये थे कि उनको जोधपुर में भोजन में विष दे दिया। इसके बाद कुछ समय तक वह विष के प्रभाव से रूग्ण रहे और 30 अक्तूबर, 1883 ई. को अजमेर में दीपावली के दिन देहत्याग कर मुक्त हो गये। उनका शेष कार्य उनके अनुगामी अनेक आर्य विद्वानों ने पूरा किया। आज चारों वेदों का महर्षि दयानन्द व उनके अनुयायियों का किया हुआ वेद भाष्य उपलब्ध है जिसका अध्ययन किया जा सकता है। महर्षि दयानन्द के युगान्तरकारी वेदभाष्य के आधार पर आजकल की आवश्यकता के अनुरूप इसके सरल व सुबोध संस्करणों की आवश्यकता अनुभव की जाती है। भविष्य में हमारे आर्य समाज के कुछ जागरूक अधिकारी व विद्वान इस कार्य को अवश्य पूरा करेंगे, ऐसी आशा की जा सकती है। इन ग्रन्थों के अतिरिक्त महर्षि दयानन्द ने संस्कार विधि, आर्याभिविनय, गोकरूणानिधि, व्यवहारभानु व अनेक लघु ग्रन्थ व व्याकरण आदि की पुस्तकें लिखीं व प्रकाशित कराईं। उनका समस्त उपलब्ध पत्रव्यवहार भी प्रकाशित हुआ है जिसके लिए सारा आर्य जगत मुख्यतः पं. भगवद्दत्त रिसर्चस्कालर एवं पं. युधिष्ठिर मीमांसक जी का आभारी है। अब धर्म-कर्म को जानने व करने के लिए कहीं कुछ कमी नहीं है। महर्षि दयानन्द ने इतने ग्रन्थों का प्रणयन किया व अपने पूर्ववर्तियों के साहित्य की ओर संकेत किया है कि जिसका अध्ययन कर मनुष्य जीवन के लक्ष्य धर्म-अर्थ-काम व मोक्ष की प्राप्ति की जा सकती है।

 अभी हमने महर्षि दयानन्द के कार्यों का वर्णन किया है, अब कुछ आर्य समाज के विगत 1 शताब्दी से अधिक समय में सम्पन्न कार्यों पर भी दृष्टि डालते हैं। पहला कार्य तो महर्षि दयानन्द ने धार्मिक अन्धविश्वास दूर करने का किया था। नवम्बर, 1869 में उन्होंने काशी में वहां के लगभग 30 शीर्षस्थ पण्डितों से मूर्तिपूजा पर शास्त्रार्थ कर मूर्तिपूजा को वेद विरूद्ध सिद्ध किया था। यह शास्त्रार्थ ऐसा ही था जैसा कि लगभग 2500 वर्ष पूर्व स्वामी शंकराचार्य जी ने बौद्ध व जैन मत के आचार्यों से किया था। महर्षि दयानन्द के मूर्तिपूजा को अवैदिक सिद्ध करने के बाद आज तक भी स्थिति यह है कि कोई भी मूर्तिपूजा का मानने वाला मूर्तिपूजा के पक्ष में वेदों से एक भी प्रमाण नहीं दे सका है। इसी प्रकार से आर्य समाज ने ईश्वर के अवतार लेने की मिथ्या धारणा को भी वेद विरूद्ध और तर्क प्रमाण विरूद्ध सिद्ध किया। फलित ज्योतिष ऐसा अन्धविश्वास है जिसे अपनाकर देश व हिन्दू जाति को अतीत में अपना सर्वस्व गंवाना पड़ा था। इस कारण हमारे लाखों वीर मारे गये व बहु बेटियों को लज्जित होना पड़ा था। यह फलित ज्योतिष भी वेद विरूद्ध व युक्ति प्रमाणों के विरूद्ध है, अतः बुद्धिजीवियों द्वारा पूर्णतः त्याज्य है। इसका समाधान पुरूषार्थयुक्त जीवन है जो सफलता का आधार है। महर्षि दयानन्द के समय में स्त्री व शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं था। उन्होंने वेद मन्त्र **‘यथेमां वाचं कल्याणीमावदानी ... ’** का प्रमाण देकर स्त्री व शूद्रों सहित मानवजाति के प्रत्येक व्यक्ति को वेद पढ़ने व पण्डित बनने का अधिकार प्रदान किया। सामाजिक असमानता और जन्मना जाति व्यवस्था पर भी महर्षि गहरी चोट की और कहा कि यह शब्द व व्यवहार निर्बुद्धि लोगों के लिए है। जो पढ़ने व पढ़ाने पर भी किंचित न पढ़े और जिसमें मूर्खातादि गुण हो वही शूद्र कहलाता है और वह श्रमिक बनकर शिक्षित व विद्वान लोगों के साथ मिलकर सेवा का कार्य करता है। परस्पर भेदभाव और छुआछूत का उसमें भी कोई स्थान नहीं है। आर्य समाज ने गुरूकुल व डीएवी कालेज खोले और वहां सभी को बिना धर्म व जाति के पक्षपात के अध्ययन करने की सुविधा प्रदान की। मुस्लिम कन्याओं ने भी वेदों का अध्ययन कर पण्डिता बनने का अवसर प्राप्त किया। अनेक अनुसूचित जाति व जनजाति के लोग आर्य समाज के गुरूकुलों में पढ़कर वेदों के शीर्ष विद्वान बने और सभी पण्डित कहलाते हैं। यह भी आर्य समाज की एक बहुत बड़ी क्रान्ति कही जा सकती है। आज भी हमारे बहुत से अनुसूचित जाति के भाई गुरूकुलों में पढ़कर आर्य समाज के आदर व श्रद्धास्पद पुरोहित का कार्य करते हैं और समाज में प्रतिष्ठित जीवन व्यतीत करते हैं। यह सब महर्षि दयानन्द प्रदत्त आर्य समाज की उपलब्धियां हैं। शिक्षा के क्षेत्र में गुरूकुल व डीएवी कालेज स्थापित कर शिक्षा जगत में आर्यसमाज ने अग्रणीय भूमिका निभाई ही और अविद्या का नाश कर विद्या की उन्नति की है। सभी मतों ने भी आर्य समाज की तर्क व युक्तियों से लाभ उठाया और अपनी मिथ्या मान्यताओं को तर्क संगत सिद्ध करने का प्रयास किया व छल व कपटपूर्ण प्रयास किया व करते रहते हैं। असत्य, असत्य ही रहता है, कितने भी तर्क दे दियें जाये। अज्ञानियों को तो जाल में फंसाया जा सकता है परन्तु ज्ञानी व विद्वानों को नहीं।

 एक बार हमने अपने वरिष्ठ विद्वान साथी स्वर्गीय प्रा. अनूप सिंह जी को प्रवचन के लिए आर्यसमाज, धामावाला, देहरादून में निवेदन किया और कहा कि विश्व परिदृश्य को दृष्टि में रखकर आर्यसमाज के कार्यों का वर्णन करें। उन्होंने आरम्भ में ही श्रोताओं से पूछा था कि ऐसा कौन सा क्षेत्र है जहां आर्यसमाज ने अपना महत्वपूर्ण योगदान नहीं दिया? आजादी के आन्दोलन का श्रेय भी आर्यसमाज को ही जाता है। इसका एक कारण क्रान्तिकारियों के अग्रदूत व पितामह पं. श्यामजी कृष्ण वम्र्मा महर्षि दयानन्द के साक्षात शिष्य थे। श्री गोपाल कृष्ण गोखले के गुरू महादेव गोविन्द रानाडे, पूना भी महर्षि दयानन्द के साक्षात् शिष्य थे। स्वतन्त्रता आन्दोलन की दोनों धारायें महर्षि दयानन्द से ही प्रष्फुटित होकर आगे बढ़ी हैं। सत्यार्थ प्रकाश, आर्याभिविनय, संस्कृत वाक्य प्रबोध में महर्षि दयानन्द ने जो देश प्रेम व स्वदेशीय राज्य की महत्ता पर लिखा है, वह आजादी के आन्दोलन का प्रमुख ध्येय, कारण व आधार बना। इतिहास में यह स्वीकार किया गया है कि आजादी के आन्दोलन में भाग लेने वाले 80 प्रतिशत लोग आर्यसमाज की विचारधारा व उससे प्रभावित थे। देश में विज्ञान, तकनीकी व उद्योगों का विकास कर लोगों को व्यवसाय प्राप्त कराने की ओर भी महर्षि का ध्यान था। इसके लिए भी उन्होंने वैचारिक एवं क्रियात्मक योगदान किया। हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने में उनकी अग्रणीय व प्रमुख भूमिका थी। उन्होंने गुजराती होकर व संस्कृत का सर्वोत्तम विद्वान होने पर भी राष्ट्रीय एकता व वेद धर्म प्रचार के लिए हिन्दी को अपनाया और उसके लिय राष्ट्रीय स्तर पर संघर्ष व प्रयास किये। यदि इस देश को सरदार पटेल की भांति कुछ और योग्य नेता मिले होते तो आज देश में हिन्दी की जो दशा है, वह उससे कहीं अधिक अच्छी हो सकती थी। गोरक्षा के लिए भी महर्षि दयानन्द का योगदान चिरस्मरणीय रहेगा। उन्होंने अनेक उच्च अंग्रेज अधिकारियों से मिलकर गोरक्षा बन्द करने का प्रयास किया था। इसके लिए उन्होंने गो एवं कृषि रक्षिणी सभा एवं उसका विधान भी तैयार किया था। गो विश्वस्य मातरः, गो विश्वस्य नाभिः, गोरक्षा राष्ट्र रक्षा है, गोहत्या राष्ट्र हत्या के तुल्य है आदि जैसे विचार उनके लेखों व विचारों से ही देश व समाज को मिले। ब्रह्मचर्य एवं सदाचार की प्रतिष्ठा को भी उन्होंने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। हम पहले वर्णन कर चुके हैं कि संसार क मत-मतान्तरों में असत्य व मिथ्या विश्वास भरे पड़े हैं जिसका उन्होंने दिग्दर्शन कराकर उन्हें दूर करने का प्राणपन से प्रयास किया। पहले लोगों को रोटी का लालच देकर या डरा कर धर्मान्तरण कर विधर्मी बना दिया जाता था। महर्षि दयानन्द ने वैचारिक, सत्य धर्म व मान्यताओं के आधार पर उस अमानवीय कार्य को रोका ही नहीं अपितु गुणों के आधार पर विधमियों को शुद्ध कर सत्य धर्म का अनुयायी बनने का अवसर प्रदान किया जिसमें उन्हें सफलता भी मिली। विधवाओं के विवाह का उन्होंने वेदों से समर्थन किया और बाल विवाह के निषेध का भी सिद्धान्त देश को दिया। बाल विवाह के विरूद्ध जो कानून बना, वह भी उनके शिष्य श्री हरविलास शारदा जी के प्रयासों से बना था। सती प्रथा को भी उन्होंने वेद विरूद्ध, अनैतिक तथा अमानवीय बताया। मांसाहार व मदिरापान मनुष्य के लिए निषिद्ध कर्म हैं। इसको करने से मनुष्य पापगामी होकर जन्म जन्मान्तरों मे ंदुःख भोगता है। पुनर्जन्म को भी उन्होंने युक्ति व तर्क तथा शास्त्रीय प्रमाणों से प्रतिष्ठित किया। महर्षि दयानन्द एवं आर्यसमाज के ऐसे अनेकानेक कार्य गिनायें जा सकते हैं जिनका देश ही नहीं सारे संसार को लाभ हुआ है।

 आर्यसमाज के स्थापना दिवस पर महर्षि दयानन्द को स्मरण कर सभी को उनकी विचारधारा व वेदों के प्रचार प्रसार करने का संकल्प लेना चाहिये। आर्य समाज का उद्देश्य वेदों का प्रचार व प्रसार करना अर्थात् सत्य को ग्रहण कर व असत्य को छुड़वाना है। आईये, आज के शुभ दिन हम सब देश व संसार में धर्म व नैतिकता के प्रचार व प्रसार करने का शुभ संकल्प ग्रहण करें जिससे यह धरा स्वर्गधाम बन सके।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**